नियोजन एवं विकास
[PLANNING AND DEVELOPMENT]

मानव प्रारम्भ से ही चिन्तनशील प्राणी रहा है। उसने कभी भी अपने आपको प्राकृतिक या सामाजिक शक्तियों के हाथों में असहाय रूप से नहीं सौंपा। उसने अपने पर्यावरण के साथ अनुकूलन ही नहीं किया वरन् उसमें संशोधन भी किया। यह मानव के ही विवेकपूर्ण हस्तक्षेप का परिणाम है कि आधुनिक सभ्यता आज इतने उच्च स्तर पर पहुँची है। इस अर्थ में मानव सदा से ही नियोजन करने वाला प्राणी रहा है। **समनर** एवं **कैलर** (Sumner and Keller) सामाजिक परिवर्तन के प्रति तीन सम्भावित मानवीय नीतियों का वर्णन करते हैं, ''तीन सम्भव नीतियाँ हैं—चीजों को, जैसे वे चाहें; अपनी राह चलने दें; अविवेकपूर्ण ढंग से हस्तक्षेप करें; विचारपूर्वक हस्तक्षेप करें। पहली नीति को किसी के द्वारा व्यवहार में कभी भी लागू नहीं किया गया; दूसरी ही सामान्य रूप से प्रचलित रही; तीसरी ही मनुष्यों की एकमात्र आशा है।'' दूसरे शब्दों में, विवेकपूर्ण ढंग से परिवर्तन की प्रक्रिया के निर्देशन में ही मानव समाज का कल्याण निहित है। **वार्ड** (Ward) ने इस विचारधारा को सामाजिक प्रयोजनवाद कहा था। उनके विचार में परिवर्तन का निर्देशन व नियन्त्रण अनियन्त्रित परिवर्तन से कहीं अधिक श्रेष्ठतर है। **बॉटोमोर** (Bottomore) तो सामाजिक नियोजन को सभी आधुनिक समाजों में किसी न किसी रूप में प्रचलित मानते हैं। **पॉल मीडोज** (Paul Meadows) ने आधुनिक समय में सामाजिक परिवर्तन के सम्बन्ध में बड़े सुन्दर ढंग से लिखा है, ''आज केवल परिवर्तन का समय नहीं है; परिवर्तन तो सदा रहा है। यह परिवर्तन की एक नई दिशा अर्थात् निर्देशन के साथ समय है; और यह संयोग ही विकास को प्रकट करता है। हर जगह परिवर्तन के अर्थ में लक्ष्यों, उपायों, गतियों, अत्यावश्यकताओं को जोड़ दिया गया है। परिवर्तन के झोंके भली प्रकार निर्देशित दिशा में बह रहे हैं।'' सुनियोजित ढंग से परिवर्तन को दिशा प्रदान करना ही नियोजित सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया है। इसे प्रेरित (Induced) या निर्देशित (Directed) परिवर्तन भी कहते हैं। भारतीय समाज में भी यह प्रक्रिया क्रियाशील हो रही है। **कार्ल मैनहिम** (Karl Mannheim) ने उचित ही लिखा है कि आज सामाजिक नियोजन और स्वतन्त्र व्यापार के बीच चुनाव का प्रश्न ही नहीं रह गया; वरन् अच्छे नियोजन या बुरे नियोजन में से एक को चुनने का प्रश्न है। सबसे पहले रूप में नियोजन के द्वारा आर्थिक विकास और सामाजिक संरचना में परिवर्तन लाने का बृहद् स्तर पर प्रयोग हुआ। हमारे देश में भी विकास का आधार नियोजन ही रहा है। इसी को भारत में विकास का प्रमुख प्रेरणा स्रोत कहा जाता है।

नियोजन का अर्थ एवं परिभाषाएँ

ओडम (Odum) के अनुसार नियोजन वह परिवर्तन है जिसके द्वारा प्राकृतिक व सामाजिक शक्तियों तथा परिणामत: विकसित सामाजिक व्यवस्था पर नियन्त्रण प्राप्त किया जाता है। **मिड्रल** (Mydral) ने नियोजन की परिभाषा इस प्रकार की है, ''नियोजन किसी देश की सरकार द्वारा किए गए वे जागरूक प्रयास हैं जिसके द्वारा लोकनीतियों को अधिक तार्किक ढंग से समन्वित किया जाता है ताकि अधिक तेजी व पूर्णता से भावी विकास के उन लक्ष्यों पर पहुँचा जा सके जोकि विकसित होती हुई राजनीतिक प्रक्रिया द्वारा निर्धारित किए गए हैं।'' **एण्डरसन** एवं **पार्कर** (Anderson and Parker) ने बड़ी सरल व्याख्या करते हुए लिखा है, ''सामाजिक नियोजन या चेतन रूप से निर्देशित सामाजिक परिवर्तन एक ऐसे कार्यक्रम का विकास है जोकि किसी समाज के लिए या उसके किसी भाग के लिए पूर्व निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए तैयार किया जाता है।'' उन्हीं विद्वानों ने निम्न प्रश्नों द्वारा नियोजित सामाजिक परिवर्तन की व्याख्या की है—नियोजन में निर्णय लेना पड़ता है कि हमें क्या करना है? कैसे करना है और कौन करेगा? तथा ये भी, कि इससे प्रभावित होने वाले व्यक्तियों को कैसे शामिल किया जाएगा? संक्षेप में, हम कह सकते हैं कि नियोजित सामाजिक परिवर्तन एक वह सामाजिक परिवर्तन है जिसे कोई समाज पूर्व-निर्धारित लक्ष्यों के अनुसार सचेतन और योजनाबद्ध रूप से सामाजिक व्यवस्था में लाने का प्रयास करता है। इस व्याख्या के अनुसार नियोजित सामाजिक परिवर्तन के निम्न तत्त्व हैं—(i) स्पष्ट एवं निर्धारित लक्ष्य, (ii) विचारपूर्वक बनाया गया समयबद्ध प्रोग्राम, और (iii) जिन समूहों पर प्रभाव पड़ता है उनकी सहभागिता।

नियोजन के लक्ष्य और उद्देश्य

फेल्पस (Phelps) के अनुसार सामाजिक नियोजन के लक्ष्य अग्रलिखित हैं—

(1) गरीबी तथा अपव्यय का उन्मूलन,

(2) शारीरिक व मानसिक रोगों की रोकथाम,

(3) सभी प्रकार की सामाजिक बुराइयों के सामाजिक स्रोतों की समाप्ति तथा

(4) व्यक्तियों की स्वतन्त्रता का विस्तार।

नॉर्थ (North) के अनुसार ऐसे परिवर्तन के निम्न पाँच लक्ष्य होते हैं—

(1) बुद्धिमत्तापूर्ण नियोजित समाज,

(2) अधिक तार्किक समाज,

(3) एक सहयोगी समाज,

(4) एक स्वतन्त्र समाज तथा

(5) एक प्रजातान्त्रिक समाज।

समाज के इन उपर्युक्त रूपों की स्थापना ही नियोजन का उद्देश्य है। **जी० आर० मदन** (G. R. Madan) ने विचार व्यक्त किया है कि नियोजन के दो पक्ष हैं—आर्थिक एवं सामाजिक। आर्थिक दृष्टि से इसके निम्न लक्ष्य हैं—

(1) एक ऊँची वृद्धि-दर तथा कृषि व उद्योग में सन्तुलन,

(2) मानवीय व राष्ट्रीय साधनों का उत्तम उपयोग तथा

(3) श्रम-शक्ति के लिए एक उचित आय-स्तर पर रोजगार के अवसर।

सामाजिक दृष्टि से इसके निम्न लक्ष्य कहे जा सकते हैं—

(1) आधारभूत सामाजिक सेवाओं जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य व आवास का विकास,

(2) समाज कल्याण का प्रबन्ध जिसमें नगर व गाँव दोनों में उचित सुविधाओं की व्यवस्था,

(3) समुदाय के पीड़ित व बाधित वर्गों का कल्याण तथा

(4) सामाजिक सुरक्षा।

विकास का अर्थ एवं परिभाषाएँ

समाजशास्त्रीय साहित्य में विकास शब्द का प्रयोग अनेक अर्थों में किया गया है। उदाहरण के लिए, औद्योगीकरण की प्रक्रिया तथा आर्थिक एवं राजनीतिक संगठनों की कार्यकुशलता में वृद्धि के लिए विकास शब्द का प्रयोग किया गया है। अनेक विद्वानों ने विकास शब्द का प्रयोग दो प्रकार के देशों—विकसित (Developed) तथा विकासशील (Developing)—में भेद करने के लिए किया है। वास्तव में, विकास (जो कि जैविक एवं सावयविक अवधारणा है) की अवधारणा का समाजशास्त्रीय अध्ययनों में प्रयोग किए जाने का एक प्रमुख कारण ही नवीन राष्ट्रों का उदय तथा इनके द्वारा विभिन्न सामाजिक समस्याओं के समाधान के प्रयास हैं। नवीन राष्ट्रों के सम्मुख एक प्रमुख समस्या को आर्थिक एवं राजनीतिक दृष्टि से सुदृढ़ बनाने तथा राष्ट्र-निर्माण करके समस्याओं के समाधान की रही है।

विकास शब्द से अभिप्राय उन्नत दिशा में विभेदीकरण है जो कि अनेक दशाओं में वृद्धि इत्यादि में देखा जा सकता है। इन दशाओं में तीन दशाएँ प्रमुख हैं—(1) श्रम-विभाजन में वृद्धि, (2) संस्थाओं और समितियों की संख्या में वृद्धि, (3) संचार साधनों में वृद्धि। इस शब्द का प्रयोग केवल परिमाणात्मक वृद्धि के लिए ही नहीं किया जाता अपितु संगठन की कार्यकुशलता में वृद्धि के लिए भी किया जाता है। **एस० एफ० नैडल** (S. F. Nadel) के अनुसार विकास शब्द से तात्पर्य केवल उस परिवर्तन से नहीं है जिससे कोई अप्रकट अथवा छिपी चीज सामने आती है, अपितु इसका सम्बन्ध सम्भावित परिवर्तनों से भी है। उनका कहना है कि विकास की प्रक्रिया का अन्तिम रूप ही किसी समाज को प्रगति की अवस्था तक पहुँचाता है। अधिकांश विद्वान् (जैसे **पारसन्स** इत्यादि) विकास शब्द का प्रयोग उन परिवर्तनों के लिए करते हैं जो औद्योगीकरण के कारण सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक संस्थाओं पर परिलक्षित होते हैं।

एस० चोडक (S. Chodak) के अनुसार विकास शब्द का प्रयोग अनेक अर्थों में किया जाता है, जिनमें से चार का उल्लेख उन्होंने अपनी पुस्तक **सोसाइटल डिवेलपमेन्ट** *(Societal Development)* में किया है। ये अर्थ हैं—

(1) उद्विकास (Evolution) के दृष्टिकोण के अनुसार विकास संगठन की उच्च अवस्था की ओर होने वाली आकस्मिक प्रक्रिया है जो कि धीमी गति से होती है।

(2) उत्पत्ति (Genetic) सम्बन्धी दृष्टिकोण के अनुसार विकास आन्तरिक तत्त्वों में वृद्धि है।

(3) संरचनात्मक-प्रकार्यात्मक (Structural-functional) दृष्टिकोण के अनुसार विकास संरचना और प्रकार्यों में परिवर्तन की एक निरन्तर प्रक्रिया है जिसके परिणामस्वरूप विशेषीकरण, विभेदीकरण, अंगों की पारस्परिक आश्रितता तथा समग्र की स्वतन्त्रता में वृद्धि होती है।

(4) निर्णायकवाद (Determinism) दृष्टिकोण के अनुसार विकास स्वत: होने वाली परिवर्तन की एक जटिल प्रक्रिया है जिसके द्वारा संरचनाओं व अन्तर्क्रियाओं में जटिलता आ जाती है।

समाजशास्त्र में विकास की अवधारणा का प्रयोग करने का श्रेय **एल० टी० हॉबहाउस** (L. T. Hobhouse) को दिया जाता है जिन्होंने अपनी पुस्तक **सोशल डिवेलपमेन्ट** *(Social Development)* में विकास की सामाजिक अवधारणा, विकास की दशाओं तथा विभिन्न प्रकार के विकासों (जैसे कि संस्थाओं का विकास अथवा बौद्धिक विकास) इत्यादि अनेक विषयों पर समुचित प्रकाश डाला है। हॉबहाउस (Hobhouse) के अनुसार, ''विकास का अभिप्राय नये प्रकार्यों के उदय होने के परिणामस्वरूप सामान्य कार्यक्षमता में वृद्धि अथवा पुराने प्रकार्यों की एक-दूसरे के साथ समायोजना के कारण सामान्य उपलब्धि में वृद्धि से है।''

हॉबहाउस ने विकास की अवधारणा को समुदायों के विकास के सन्दर्भ में विकसित किया है। यदि कोई समुदाय अपने स्तर, कुशलता, स्वतन्त्रता तथा पारस्परिकता में आगे बढ़ता है तो हम यह कह सकते हैं कि वह अमुक समुदाय विकास की ओर अग्रसर है। किसी एक तत्त्व का ही नहीं अपितु सभी तत्त्वों का समन्वय विकास के लिए अनिवार्य है। इनके विचारों में सामाजिक दृष्टि से विकास के निम्नलिखित चार मापदण्ड स्पष्ट होते हैं—

(1) संगठन (जैसे कि समुदाय) के स्तर या मात्रा (Scale) में वृद्धि,

(2) संगठन की कार्यक्षमता में वृद्धि,

(3) स्वतन्त्रता (सोचने विचारने, पहल करने तथा स्वयं को अपनी इच्छानुसार किसी भी रूप में ढालने की स्वतन्त्रता) में वृद्धि तथा

(4) पारस्परिकता में वृद्धि।

उपर्युक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि विकास सामाजिक परिवर्तन का एक ऐसा स्वरूप है जिसमें उन्नत दिशा की ओर विभेदीकरण होता है और संगठनों के स्तर, कुशलता, स्वतन्त्रता तथा पारस्परिकता में वृद्धि होती है। फिर भी, इसके अर्थ के बारे में विद्वानों में मतैक्य का अभाव पाया जाता है। इसीलिए विकास की धारणा प्रारम्भ से लेकर आज तक विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त की जाती रही है।

विकास की परिवर्तनशील धारणाएँ

'विकास' शब्द जितना सरल है इसका निश्चित शब्दों में अर्थ बताना उतना ही कठिन है। इसका कारण विकास की निरन्तर परिवर्तनशील धारणा अथवा अवधारणा है। मुख्य रूप से परिवर्तन का सम्प्रत्यीकरण निम्न अर्थों में किया गया है—

(1) आर्थिक विकास अथवा वृद्धि (राष्ट्रीय आय में वृद्धि, प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि तथा सर्वांगीण विकास),

(2) मानवीय विकास (विकास का अन्तिम लक्ष्य सभी को अच्छे जीवन हेतु अधिक अवसर प्रदान करना जैसे कि शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण, आवास, सामाजिक कल्याण एवं पर्यावरण के संरक्षण जैसी सुविधाओं में सुधार पर बल देना),

(3) सामाजिक विकास (मानवीय ज्ञान में वृद्धि तथा प्राकृतिक पर्यावरण पर मानवीय नियन्त्रण में अधिकाधिक वृद्धि),

(4) संपोषित या सतत विकास (जिसका लक्ष्य आर्थिक, पर्यावरणीय एवं सामाजिक आवश्यकताओं में सन्तुलन बनाए रखना है ताकि वर्तमान एवं भावी पीढ़ियों की आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके),

(5) पारिस्थितिकीय विकास (आर्थिक विकास को पारिस्थितिकीय विकास के सन्दर्भ में ही समझना),

(6) उदारवादी विकास (निजी क्षेत्र के विकास एवं उदारीकरण की नीति पर आधारित) तथा

(7) विकास का मार्क्सवादी परिप्रेक्ष्य (शोषणकारी पूँजीवादी व्यवस्था को बदलने के लिए श्रमिकों का एक होना आवश्यक तथा आर्थिक विकास के क्रमिक परिवर्तन के परिणामस्वरूप अन्तत: राज्य समाप्त हो जाना)।

परिवर्तनशील विकास उपक्रम एवं राज्य की नीतियाँ
(Changing Development Initiatives and State Policies)

भारत में विभिन्न क्षेत्रों में विकास के लिए नीतियाँ और हस्तक्षेप निम्नलिखित हैं—

(1) गरीबी उन्मूलन और रोजगार सृजन।

(2) शिक्षा तक पहुंच।

(3) बेहतर स्वास्थ्य सेवाओं और सार्वजनिक स्वास्थ्य तक पहुंच।

(4) महत्वपूर्ण ग्रामीण बुनियादी ढाँचे का विकास, उदा। ग्रामीण सड़कें, आवास, स्वच्छता, सुरक्षित पेयजल, बिजली की उपलब्धता आदि।

भारत में विकास की विफलताएँ निम्नलिखित हैं—

(1) गरीबी दूर करने में असफलता।

(2) सभी सक्षम व्यक्तियों को रोजगार प्रदान करने में विफलता।

(3) आय और धन की असमानता को कम करने में विफलता।

(4) भूमि सुधारों के कार्यान्वयन में विफलता।

अंतर-क्षेत्रीय असमानता को कम करने में विफलता, जैसे कुछ राज्य तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, केरल, महाराष्ट्र अच्छा प्रदर्शन कर रहे हैं, जबकि उत्तरी राज्य जैसे बिमारू पिछड़ते जा रहे हैं।

(5) शिक्षा और स्वास्थ्य उपेक्षित रहे।

विकास योजना की इन मूलभूत विफलताओं के मद्देनजर, नई विकास सोच की विशेषता अब निम्नलिखित हैं—

- विकास लोगों की महसूस की गई जरूरतों और आकांक्षाओं पर आधारित होना था, और यह देश की विविधता और बहुलवाद के अनुरूप होना था। दूसरे शब्दों में, विकास को एक **समरूप अवधारणा** के रूप में नहीं माना जाता था। इसका मतलब अलग-अलग आबादी के लिए अलग-अलग चीजें हो सकती हैं;
- **सतत विकास**, अर्थात् विकास प्रक्रिया पर्यावरण संरक्षण के लिए हमारी चिंता के अनुरूप होनी चाहिए;
- **मानव विकास**, अर्थात ध्यान लोगों के 'कल्याण' के बजाय 'कल्याण' पर होना था, अर्थात अब विकास का मतलब उनके पोषण, शैक्षिक और अन्य लोगों को संबोधित करके जनता के जीवन स्तर को ऊपर उठाना होगा। जरूरत है;
- **समावेशी विकास**, अर्थात् सभी का विकास, विशेष रूप से वे जो हाशिये पर रह रहे हैं; विकास व्यक्तियों और सामाजिक समूहों पर एक सशक्त प्रभाव पड़ता था;
- **भागीदारी विकास**, यानी विकास प्रक्रिया में सभी स्तरों पर निणर्य लेने में प्राथमिक हितधारकों को शामिल करना चाहिए। दूसरे शब्दों में, इसे विकास के एजेंट के रूप में प्राथमिक हितधारकों के साथ व्यवहार करना चाहिए, न कि केवल लाभार्थियों या विकास की वस्तुओं के रूप में। यह एक केंद्रीकृत के बजाय एक विकेंद्रीकृत नियोजन प्रणाली की आवश्यकता है।

इसलिए, विकास की सोच के नए प्रतिमानों के तहत, विकास एक 'सरकार के नेतृत्व वाली, नौकरशाही-प्रबंधित और कुशल' विकास उद्यम के बजाय एक 'समुदाय के नेतृत्व वाली, समुदाय-प्रबंधन और स्थानीय संसाधन-आधारित' प्रक्रिया होना था।

भारत में प्रमुख योजनाएँ

फ्लैगशिप कार्यक्रम देश की विकासात्मक नीति के मुख्य जोर का प्रतीक हैं। भारत सरकार की फ्लैगशिप योजनाएँ वे योजनाएँ हैं जिन्हें केंद्रीय मंत्रिमंडल या योजना आयोग की विकास मूल्यांकन सलाहकार समिति (डीईएसी) द्वारा घोषित किया जाता है। फ्लैगशिप कार्यक्रमों की सूची को समय-समय पर डीईएसी या सरकार द्वारा संशोधित किया जा सकता है।

(1) भारत निर्माण (Bharat Nirman)

(2) मनरेगा (MGNREGA)

(3) सर्व शिक्षा अभियान (SSA)
(4) मध्याह्न भोजन योजना (MDMS)
(4) इंदिरा आवास योजना (IAY)
(5) राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना (RGGVY)
(6) जल और स्वच्छता मिशन [NRDWP और TSC]
(7) प्रधान मंत्री ग्राम सड़क योजना (PMGSY)
(8) राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (NRHM)
(9) एकीकृत बाल विकास सेवा (ICDS)
(10) राष्ट्रीय कृषि विकास योजना (RKVY)
(11) त्वरित सिंचाई लाभ कार्यक्रम (AIBP)
(12) जेएनएनयूआरएम (JNNURM)
(13) स्वर्ण जयंती शहर रोजगार योजना (Swarna Jayanti Shahari Rozgar Yojana)
(14) राजीव आवास योजना (RAY)।

भारत में नियोजन में प्रमुख बाधाएँ

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् का भारत का इतिहास नियोजित सामाजिक परिवर्तनों द्वारा देश को विकास की ओर तथा समाजवाद की ओर ले जाने वाले प्रयासों से भरपूर है। परन्तु जितनी प्रगति नियोजित सामाजिक परिवर्तन द्वारा भारतीय समाज में होनी चाहिए थी उतनी नहीं हो पाई है। इसका प्रमुख कारण भारतीय समाज में नियोजन के मार्ग में आने वाली प्रमुख बाधाएँ हैं जिनमें से कुछ प्रमुख निम्नलिखित हैं—

(1) अशिक्षा—देश को नियोजित सामाजिक परिवर्तन द्वारा आगे बढ़ाने के लिए जनता का सक्रिय सहयोग अनिवार्य है। परन्तु हमारे देश में अधिकांश जनसंख्या अशिक्षित है। 2001 की जनगणना के अनुसार भारत में साक्षरता का स्तर लगभग 64·8 प्रतिशत है जिसके कारण अधिकांश देशवासी नियोजन का अर्थ ही नहीं समझते तथा विकास को केवल सरकार का उत्तरदायित्व मानते हैं और इसलिए अपना सक्रिय सहयोग नहीं देते।

(2) गुटबन्दी—नियोजित सामाजिक परिवर्तन के मार्ग में आने वाली दूसरी प्रमुख बाधा भारतीय समाज में पाई जाने वाली गुटबन्दी है। भारतीय राजनीति गुटबन्दी पर आधारित है। अत:, यदि शासकदल कोई योजनाबद्ध कार्य शुरू करता है तो विरोधी दल वाले उसे समर्थन नहीं देते। इससे योजनाबद्ध कार्यक्रमों को समय पर पूरा करने में कठिनाई होती है।

(3) रूढ़िवादिता—नियोजित सामाजिक परिवर्तन एक वैज्ञानिक दृष्टि है जोकि लक्ष्य एवं साधनों की तार्किक गणना से सम्बन्धित है। भारत परम्परागत रूप से परम्परावादी एवं रूढ़िवादी देश रहा है। आज भी अधिकांश भारतीय जनता इन परम्परागत विश्वासों के कारण ही कुरीतियों को समाप्त करने में सरकार का सहयोग नहीं देती है। उदाहरण के लिए, दहेज प्रथा कनूनी रूप से समाप्त कर दी गई है परन्तु जनता का सहयोग न मिलने के कारण, अल्प मात्रा में ही सही यह कुरीति आज भी हमारे देश में प्रचलित है।

(4) व्यावहारिकता का अभाव—हमारे देश में अनेक योजनाएँ राजनीति से प्रेरित होती हैं और उनका उद्देश्य किसी विशेष राज्य या क्षेत्र के मतदाताओं को प्रभावित करना हो सकता है। अत: चुनाव के समय घोषित अनेक योजनाओं के व्यावहारिक पक्ष पर विस्तृत रूप से विचार-विमर्श तक नहीं किया जाता। चुनाव के बाद अनेक ऐसी योजनाएँ अव्यावहारिक होने के कारण प्राय: समाप्त हो जाती हैं।

(5) साधनों की कमी—भारतवर्ष में नियोजित सामाजिक परिवर्तन के मार्ग के एक अन्य बाधा साधनों की कमी है। योजनाओं में लक्ष्य निर्धारित करते समय भी कई बार उपलब्ध साधनों की मात्रा को ध्यान में नहीं रखा जाता। इसका परिणाम यह होता है कि साधनों के अभाव में अनेक कार्यक्रम अधूरे रह जाते हैं।

(6) ग्रामीण विशिष्टजनों की उदासीनता—भारत में नियोजित सामाजिक परिवर्तन में एक अन्य बाधा प्रभावशाली व्यक्तियों द्वारा विकास योजनाओं में असहयोग है। **एस० सी० दुबे** ने सामुदायिक विकास योजनाओं की असफलता का कारण ग्रामों में रहने वाले प्रभावशाली वर्ग (विशिष्टजन वर्ग) द्वारा इन योजनाओं को सफल बनाने में सहयोग न देना बताया है। वे ग्रामवासियों को कई बार इनका विरोध करने तक को प्रेरित करते हैं।

(7) सामान्य जनता की उदासीनता—भारत में नियोजित सामाजिक परिवर्तन की धीमी गति का एक कारण सामान्य जनता की विकास कार्यक्रमों के प्रति उदासीनता, सरकार के प्रति उदासीनता तथा राष्ट्र के प्रति उदासीनता है। वास्तव में, आज सभी अपने व्यक्तिगत हितों में इतने उलझे हुए हैं कि सम्पूर्ण राष्ट्र के बारे में कोई सोचता ही नहीं और अगर समय आता है तो अपना सक्रिय सहयोग नहीं देते।

(8) राजनीतिज्ञों एवं बुद्धिजीवियों में असहयोग—भारत में नियोजित सामाजिक परिवर्तन में एक अन्य बाधा राजनीतिक नेताओं (जो कि विकास योजनाओं का निर्माण करते हैं तथा इन्हें कार्यान्वित करते हैं) तथा बुद्धिजीवियों से प्रत्यक्ष सम्पर्क का अभाव है। उदाहरण के लिए, भारतवर्ष में विभिन्न विकास योजनाओं के बारे में बुद्धिजीवियों की राय की उपेक्षा की जाती है। सामाजिक वैज्ञानिकों से इन योजनाओं के बारे में सलाह नहीं ली जाती, अत: इनमें अनेक कमियाँ रह जाती हैं।

भारत में सुरक्षात्मक भेदभाव की नीति
[POLICY OF PROTECTIVE DISCRIMINATION IN INDIA]

सुरक्षात्मक भेदभाव शब्द का अर्थ है कि उन लोगों के पक्ष में एक अधिकार या विशेषाधिकार प्रदान किया जाता है जिन्होंने उम्र के बाद से उत्पीड़न और भेदभाव किया है। भेदभाव के खिलाफ भेदभाव व्यापक रूप से ज्ञात बोली 'लोहे की कटौती लोहा' पर आधारित है। इतिहास से यह स्पष्ट है कि एक प्रकार का भेदभाव प्रकृति में नकारात्मक और विनाशकारी है जबकि दूसरा प्रकार उपचारात्मक और सुरक्षात्मक है।

अब प्रश्न उठता है कि समाज के कमजोर वर्ग का गठन क्या है? इसमें न केवल अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़े वर्ग बल्कि समाज के महिला वर्ग भी शामिल हैं। या तो उच्च वर्ग या निम्न वर्ग से, वे लगातार पक्षपात और अन्याय का सामना कर रहे हैं। महिलाओं को पिछड़े वर्ग के साथ कठिनाइयों और भेदभाव के अधीन किया गया है। समाज में पुरुषों के समान स्थिति भी उन्हें प्रदान नहीं की गई है।

सकारात्मक कार्रवाई और भेदभावपूर्ण उपाय जटिल और विवादास्पद मुद्दे हैं। सकारात्मक कार्रवाई का उद्देश्य उन प्रतिनिधियों की स्थापना में तेजी लाना है, जो अपने उच्चतम क्षमता को पूरा करने के लिए अनुचित भेदभाव से वंचित अतीत में थे, उनकी सहायता करने के अलावा कार्यबल की अनदेखी की गई है। यह शब्द उन भावनाओं को आमंत्रित करता है जो भय और क्रोध से लेकर संतुष्टि। सकारात्मक कार्रवाई ने समाज में कुछ समूहों के लोगों के अधिमान्य उपचार से उत्पन्न होने वाले कानूनी, नैतिक और आर्थिक सवालों के बारे में एक सतत बहस को प्रोत्साहित किया है। इस बहस को समझना रिवर्स भेदभाव या गलत तरीके से नुकसान उठाने वाले व्यक्तियों की धारणा के बारे में विभिन्न चिंताएं हैं जो सहन करते हैं दूसरों द्वारा किए गए अतीत या वर्तमान भेदभाव के लिए कोई जिम्मेदारी नहीं।

यह लेख भारत गणराज्य में नौकरियों की जाति व्यवस्था और नौकरियों में आरक्षण के संबंध में वर्तमान स्थिति के बारे में पुष्टिकारक कार्रवाई और कार्यस्थल में समानता की उपलब्धि के संदर्भ में बताता है। इसका उद्देश्य सामाजिक रूप से स्वीकार्य अर्थात् जाति के बारे में राय के चरम विभाजन को उजागर करना है। इसके अलावा, यह पाठक को भारत में पहले स्थान पर सकारात्मक कार्रवाई की आवश्यकता की समझ प्रदान करता है और इस प्रकार भेदभाव को समझने और सकारात्मक कार्रवाई उपायों की आवश्यकता के लिए एक शक्तिशाली उपकरण बनाता है। एक अन्य लक्ष्य सकारात्मक कार्रवाई कार्यक्रमों को लागू करने में शामिल सभी व्यक्तियों को उपयोगी दिशानिर्देश और जानकारी प्रदान करना है। यह दिखाने के लिए कार्य करता है कि यदि सकारात्मक कार्रवाई के उपायों और / या भेदभावपूर्ण उपायों को ठीक से नहीं सोचा गया है, तो सकारात्मक कार्रवाई समानता और समानता प्राप्त करने और अतीत के गलतियों को दूर करने के बजाय भेदभावपूर्ण हो जाती है।

कोई यह पूछ सकता है कि दक्षिण अफ्रीका के संदर्भ के लिए भारतीय संविधान की नीतियों से निपटने के पहलुओं के इस विशेूषण से क्या लाभ होगा। अन्य देशों की राजनीतिक, कानूनी और संवैधानिक प्रणालियों का विशेूषण बहुत प्रासंगिक है। यह देश की अपनी स्थिति की बेहतर समझ को बढ़ावा देने में मदद करता है और अपने स्वयं के संस्थानों के उचित मूल्यांकन में सहायता करता है। यह गठन की व्याख्या में भी मदद करता है और मानवाधिकारों को लागू करने में मदद करता है। आगे, जब भी सकारात्मक कार्रवाई जैसा कोई विवादास्पद विषय होता है, जो बहुत बड़ी कठिनाई पैदा करता है, तो इस तरह की समस्या का तुलनात्मक

अध्ययन की मदद से हल किया जा सकता है। यह अध्ययन इस लिहाज से भी उपयोगी होगा कि भारत के अनुभव भविष्य के दक्षिण अफ्रीका और सकारात्मक कार्रवाई के दीर्घकालिक परिणामों को सूचित करने में सहायक हो सकते हैं। इसलिए इस देश में समान अवसर से संबंधित प्रासंगिक संवैधानिक प्रावधानों का अध्ययन महत्वपूर्ण हो जाता है। यह दृष्टिकोण इस मायने में उपयोगी हो जाता है कि एक देश में अनुभव अन्य देशों को ऐसी प्रथाओं से सीखने में मदद करेगा।

अनुसूचित जातियाँ एवं जनजातियाँ : संवैधानिक प्रावधान

भारतीय संविधान में जनजातीय कल्याण से सम्बद्ध 20 अनुच्छेद तथा दो विशिष्ट अनुसूचियाँ हैं। इनमें **अनुच्छेद 46** सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है जिसमें इस बात का उल्लेख है कि निर्धन अनुसूचित जनजाति के लोगों के शैक्षणिक एवं आर्थिक हितों की रक्षा हेतु राज्य विशेष प्रयास करेगा तथा उन्हें सभी प्रकार के सामाजिक अन्याय एवं शोषण से मुक्ति दिलाएगा। **अनुच्छेद 330, 332** तथा **334** में जनजाति के सदस्यों के लिए लोकसभा तथा विधानसभा में सीटों के आरक्षण का प्रावधान है। इसी भाँति, **अनुच्छेद 335** में नौकरियों में आरक्षण का प्रावधान है। यह सत्य है कि आरक्षण एवं संवैधानिक प्रावधानों के परिणमास्वरूप जनजातियों में एक नवीन चेतना का विकास हुआ है तथा उनके सामाजिक-आर्थिक स्तर में सुधार हुआ है। फिर भी, अधिकांश जनजातियाँ सरकारी नीतियों का लाभ नहीं उठा पाई हैं। इसका परिणाम यह है कि आज भी जनजातियाँ भूमि सम्बन्धी समस्या, ऋणग्रस्तता, औद्योगिक श्रमिकों के रूप में शोषण, स्वास्थ्य व शिक्षा सम्बन्धी पिछड़ेपन जैसी समस्याओं का सामना कर रही हैं। इस प्रकार, सरकारी नीतियों ने जहाँ एक ओर जनजातीय विकास को गति प्रदान की है, वहीं दूसरी ओर उनमें अनेक समस्याएँ भी विकसित हो गई हैं।

2011 ई० की जनगणना के अनुसार देश की कुल आबादी (121·08 करोड़) में अनुसूचित जनजातियों तथा अनुसूचित जातियों की संख्या क्रमश: 10·45 करोड़ तथा 20·14 करोड़ थी जोकि भारत की कुल आबादी का 25·2 प्रतिशत थी। इसके अतिरिक्त, कुछ राज्य सरकारों ने भी अन्य पिछड़े वर्गों के नाम पर **खानाबदोश** तथा **अर्द्ध-खानाबदोश** जनजातियों एवं समुदायों का उल्लेख किया है। पंचवर्षीय योजनाओं में इन जनजातियों एवं जातियों के उत्थान को राष्ट्रीय नीति का एक मुख्य लक्ष्य माना गया है।

अनुसूचित जनजातियों, अनुसूचित जातियों और अन्य कमजोर वर्गों का शैक्षिक तथा आर्थिक दृष्टि से उत्थान करने और उनकी सामाजिक असमर्थताओं को दूर करने के उद्देश्य से उन्हें संवैधानिक सुरक्षा एवं संरक्षण प्रदान किया गया है। मुख्य संरक्षण इस प्रकार हैं —

(1) अस्पृश्यता का पूर्णत: उन्मूलन तथा इसके लिए किसी भी रूप में प्रचलन का निषेध **(अनुच्छेद 17)**;

(2) इन जनजातियों और जातियों के शैक्षिक और आर्थिक हितों की रक्षा और उनका सभी प्रकार के शोषण तथा सामाजिक अन्याय से बचाव **(अनुच्छेद 46)**;

(3) हिन्दुओं के सार्वजनिक एवं धार्मिक संस्थानों के द्वार समस्त हिन्दुओं के लिए खोलना **(अनुच्छेद 25 ख)**;

(4) दुकानों, सार्वजनिक भोजनालयों, होटलों तथा सार्वजनिक मनोरंजन स्थलों में प्रवेश अथवा पूर्ण या आंशिक रूप से राज्य निधि से पोषित अथवा साधारण जनता के उपयोग के लिए समर्पित कुओं, तालाबों, स्नानघाटों, सड़कों तथा सार्वजनिक समागम के स्थानों के उपयोग के बारे में किसी भी प्रकार की अयोग्यता, दायित्व, प्रतिबन्ध अथवा शर्तों को हटाना **[अनुच्छेद 19(2)]**;

(5) किसी भी अनुसूचित जनजाति के हित में सभी नागरिकों को स्वतन्त्रतापूर्वक आने-जाने, बसने और सम्पत्ति अर्जित करने के सामान्य अधिकारों में कानून द्वारा कटौती करने की व्यवस्था **[अनुच्छेद 19(5)]**;

(6) राज्य द्वारा पोषित अथवा राज्य निधि द्वारा सहायता करने वाली किसी शिक्षा संस्था में प्रवेश पर किसी भी तरह के प्रतिबन्ध का निषेध **[अनुच्छेद 29(2)]**;

(7) राज्यों को पिछड़े वर्गों के लिए उन सरकारी सेवाओं में, जहाँ उनका प्रतिनिधित्व अपर्याप्त है, आरक्षण करने का अधिकार देना तथा राज्यों के लिए यह अपेक्षित करना कि वह सरकारी सेवाओं में नियुक्तियाँ करने के मामलों में अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के दावों को ध्यान में रखें **(अनुच्छेद 26 तथा 335)**;

(8) अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों को 25 जनवरी, 2020 ई० तक लोकसभा तथा राज्य विधानसभाओं में विशेष प्रतिनिधित्व देना **(अनुच्छेद 330, 332, तथा 334)**;

(9) अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के कल्याण तथा हितों की रक्षा के लिए राज्यों में जनजाति सलाहकार परिषदों तथा पृथक् विभागों की स्थापना करना और केन्द्र में एक विशेष अधिकारी की नियुक्ति करना (**अनुच्छेद 164 तथा 338** और **पंचम अनुसूची)**;

(10) अनुसूचित जातीय और जनजातीय क्षेत्रों के प्रशासन और नियन्त्रण के लिए विशेष उपबन्ध (अनुच्छेद 244 और पंचम तथा षष्ठम अनुसूची); तथा

(11) मानव का देह व्यापार तथा जबरदस्ती मजदूरी कराने का निषेध।

अन्य पिछड़े वर्गों के प्रति सरकारी नीति

1977 ई० में जनता पार्टी ने अपने घोषणा-पत्र में जातीय असमानताएँ समाप्त करने तथा अन्य पिछड़े वर्गों हेतु सरकारी नौकरियों व शिक्षा-संस्थाओं में 25 और 33 प्रतिशत के बीच स्थान सुरक्षित रखने का वायदा किया। सत्ता में आने के पश्चात् जनता पार्टी द्वारा **'मण्डल कमीशन'** नियुक्त किया गया। इस बहुचर्चित कमीशन ने देश की 52 प्रतिशत जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करने वाले अन्य पिछड़े वर्गों हेतु सरकारी सेवाओं व शिक्षा संस्थाओं में 27 प्रतिशत आरक्षण का सुझाव दिया जिसे अन्ततः **श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह** के प्रधानमन्त्रित्व काल में काफी विरोध के बावजूद स्वीकार कर लिया गया।

राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग वित्त और विकास निगम का गठन 13 जनवरी, 1992 ई० को किया गया था। इसका उद्देश्य गरीबी की रेखा के नीचे (जो कि ग्रामीण क्षेत्रों में 40 हजार रुपये और शहरी क्षेत्रों में 55 हजार रुपये से कम है) रहने वाले पिछड़े वर्गों के लोगों को उनके सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए रियायती दरों पर वित्तीय सहायता उपलब्ध कराना है। यह सहायता आमदनी अर्जित करने वाली योजनाओं के लिए ऋण उपलब्ध कराके की जाती है। निगम आर्थिक और वित्तीय रूप से चलाई जा सकने वाली योजनाओं और परियोजनाओं के लिए अतिरिक्त चैनलों से भी धन जुटाने की व्यवस्था करता है तथा पिछड़े वर्गों के लोगों और समूहों के तकनीकी और उद्यमी कौशल को बढ़ाने जैसे कार्यों को भी अपने हाथ में लेता है। निगम ने 2001-02 ई० तक 3,81,491 लोगों के लाभ के लिए कुल 641·82 करोड़ रुपये आबंटित किए। यह सहायता विभिन्न योजनाओं; जैसे—जमानत राशि और सावधि ऋण योजना, माइक्रो-वित्त योजना तथा शैक्षिक ऋण योजना आदि के जरिए उपलब्ध कराई गई।

निगम ने पिछड़े वर्गों की उपयुक्त महिला लाभकर्ताओं के लिए 'स्वर्णिमा' नाम से एक विशेष योजना शुरू की है। इस योजना के तहत उपयुक्त महिलाएँ चार प्रतिशत सालाना ब्याज की रियायती दरों पर 50 हजार रुपये तक की वित्तीय सहायता प्राप्त कर सकती हैं। यह ऋण अधिकतम 12 वर्ष की अवधि में लौटाया जा सकता है। भारत सरकार ने निगम को अब तक 700 करोड़ रुपये की अधिकृत शेयर पूँजी में से 390·40 करोड़ रुपये की अदायगी कर दी है। 2002-03 ई० के बजट में 12 करोड़ रुपये का प्रावधान है।

सरकार ने अन्य पिछड़े वर्गों के कल्याण के लिए 1998-99 ई० में निम्नलिखित योजनाएँ शुरू की हैं—

(1) मैट्रिक-पूर्व छात्रवृत्ति—मैट्रिक-पूर्व छात्रवृत्तियाँ ऐसे छात्रों को दी जाती हैं जिनके माता-पिता/अभिभावकों की सालाना आमदनी 44,500 रुपये से अधिक नहीं होती। ये छात्रवृत्तियाँ पहली कक्षा या मैट्रिक-पूर्व किसी कक्षा में दिन में पढ़ने वाले विद्यार्थियों को या छात्रावासों में रहने वाले तीसरी या मैट्रिक-पूर्व किसी भी कक्षा में पढ़ने वाले विद्यार्थी को दी जाती हैं। छात्रवृत्तियाँ राज्य सरकारों/केन्द्रशासित प्रदेशों से मान्यता प्राप्त विद्यालयों में पढ़ने वाले छात्रों को दी जाती हैं। इस योजना के अन्तर्गत राज्य सरकारों को 50 प्रतिशत और केन्द्रशासित प्रदेशों को शत-प्रतिशत केन्द्रीय सहायता उनके स्वयं द्वारा निर्धारित राशि के अतिरिक्त दी जाती है। इस योजना के अन्तर्गत वर्ष 2009-10 (31-12-2009 तक) के दौरान 30 करोड़ रुपये की राशि 12 राज्यों को जारी की गई जिससे 9 लाख गरीब विद्यार्थियों को लाभ पहुँचा।

(2) मैट्रिक के बाद पढ़ने वाले छात्रों को छात्रवृत्ति—इस योजना के अन्तर्गत पी-एच० डी उपाधि सहित मैट्रिक/माध्यमिक स्तर के बाद पिछड़े वर्ग के विद्यार्थियों को वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है ताकि वे अपनी पढ़ाई पूरी कर सकें। इसमें सम्बन्धित राज्यों/केन्द्रशासित प्रदेशों को छात्रवृत्ति के लिए केन्द्र सरकार द्वारा शत-प्रतिशत सहायता दिया जाना सुनिश्चित किया गया है। यह केन्द्रीय छात्रवृत्ति अन्य पिछड़े वर्गों के उन भारतीय नागरिकों के लिए है, जो मान्यता प्राप्त संस्थानों में शिक्षा प्राप्त करते हैं तथा जिनके

माता-पिता/अभिभावक की सालाना आमदनी 45,500 रुपये से अधिक नहीं है। इस योजना के अन्तर्गत 16 राज्यों/केन्द्रशासित प्रदेशों को 135 करोड़ रुपये की राशि जारी की गई। इससे वर्ष 2009-10 के दौरान 4,16,765 विद्यार्थियों ने लाभ उठाया।

(3) अन्य पिछड़े वर्गों के बालकों और बालिकाओं के लिए छात्रावास—इस योजना का उद्देश्य सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों के विद्यार्थियों को शिक्षा प्राप्ति के बेहतर अवसर उपलब्ध कराना है। इसके अन्तर्गत उन राज्यों/केन्द्रशासित प्रदेशों में छात्रावासों का निर्माण किया गया है जहाँ अन्य पिछड़े वर्गों की घनी आबादी है और छात्रावासों की कमी है। केन्द्र सरकार छात्रावासों के निर्माण हेतु राज्यों को 50 प्रतिशत और केन्द्रशासित प्रदेशों को शत-प्रतिशत सहायता उपलब्ध कराती है। ये छात्रावास माध्यमिक, उच्चतर माध्यमिक, कॉलेज और विश्वविद्यालयों में पढ़ने वाले छात्रों के लिए बनाए गए हैं। इनमें कम-से-कम एक-तिहाई छात्रावास सिर्फ लड़कियों के लिए हैं। पाँच प्रतिशत सीटें विकलांग छात्रों के लिए आरक्षित रखी गई हैं। परन्तु यह योजना साधन-सम्पन्न वर्ग के छात्रों के लिए नहीं होती है। इस योजना के अन्तर्गत 2009-10 ई० में 11 राज्यों/केन्द्रशासित प्रदेशों को अन्य पिछड़ा वर्ग के 4,520 विद्यार्थियों के लिए 17 छात्रावासों के निर्माण हेतु 19·58 करोड़ रुपये जारी किए गए हैं।

(4) अन्य पिछड़े वर्गों के कल्याण के लिए स्वयंसेवी संगठनों को सहायता—इस योजना में स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा अन्य पिछड़े वर्गों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति और शिक्षा का स्तर ऊँचा उठाना शामिल है, ताकि उन्हें समुचित रोजगार मिल सके। इसके लिए ऐसे केन्द्र खोलने और सेवाएँ शुरू करने में सहायता दी जाएगी, जो पिछड़े वर्गों को अपनी आय जुटाने के क्रियाकलाप शुरू करने में मदद कर सकें। सहायता की यह मात्रा सरकार द्वारा मेरिट के आधार पर तय की जाएगी तथा यह स्वीकृत खर्च का 90 प्रतिशत तक हो सकती है। इन प्रशिक्षण केन्द्रों में बढ़ईगिरी, कम्प्यूटर, दस्तकारी, इलेक्ट्रीशियन, मोटर मैकेनिक, फोटोग्राफी, मुद्रण, कम्पोजिंग, बुक बाइडिंग, टाइप और शार्टहैण्ड, वैल्डिंग, फिटिंग आदि का प्रशिक्षण दिया जाता है। वर्ष 2009-10 ई० में गैर-सरकारी संगठनों द्वारा चलाए जा रहे कार्यक्रमों के लिए 5·00 करोड़ रुपये जारी किए गए।

(5) नौकरियों में आरक्षण—सरकारी नियन्त्रण वाली सेवाओं में अन्य पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण की व्यवस्था की गई है। अखिल भारतीय स्तर पर मुक्त प्रतियोगिता परीक्षा के जरिये सीधी भर्ती से भरे जाने वाले पदों में अन्य पिछड़े वर्गों के लिए 27 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की गई है। मुक्त प्रतियोगिता को छोड़कर अन्य तरीकों से अखिल भारतीय आधार पर सीधी भर्ती से भरे जाने वाले पदों में अन्य पिछड़े वर्गों के लिए 25·84 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था है। आरक्षित रिक्तियाँ उपयुक्त श्रेणी के उम्मीदवारों से ही भरी जाएँ, यह सुनिश्चित करने हेतु कुछ रियायतें और छूट (जैसे अधिकतम आयु सीमा में छूट) दी जाती है। आरक्षण की यह नीति राष्ट्रीयकृत सार्वजनिक क्षेत्रों के बैंकों सहित सार्वजनिक क्षेत्रों के उपक्रमों में भी अपनाई जा रही है। राज्य सरकारों ने भी अन्य पिछड़े वर्गों को पदों में आरक्षण प्रदान किया है तथा राज्य सेवाओं में उनके प्रतिनिधित्व को बढ़ाने के उपाय किए हैं लेकिन राज्य सरकार की सेवाओं ने आरक्षण सम्बन्धित राज्य सरकार के क्षेत्राधिकार में आता है।

संविधान के **अनुच्छेद 15(4)** के अन्तर्गत सरकार को सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों की उन्नति के लिए विशेष प्रावधान करने का अधिकार है। **अनुच्छेद 16(4)** में सरकार को उन पिछड़े वर्गों के लिए सेवाओं और पदों में आरक्षण की व्यवस्था का अधिकार दिया गया है, जिन्हें उसकी राय में सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं मिला है। संविधान के **अनुच्छेद 340** में व्यवस्था है कि राष्ट्रपति सामाजिक और शिक्षा की दृष्टि से पिछड़े वर्गों की परिस्थितियों और काम के मामले में उनकी कठिनाइयों का पता लगाने के लिए आयोग नियुक्त कर सकते हैं। इस आयोग द्वारा ये कठिनाइयाँ दूर करने के बारे में केन्द्र या अन्य सरकारों से उपाय करने को कहा जा सकता है।

उपर्युक्त सुविधाओं के अतिरिक्त अन्य पिछड़े वर्गों के उत्थान हेतु भारत सरकार के कल्याण मन्त्रालय के अधीन 13 जनवरी, 1992 ई० को **'राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग वित्त और विकास निगम'** का गठन किया गया है। इसका प्रमुख उद्देश्य पिछड़े वर्गों के कल्याण के लिए आर्थिक और विकास सम्बन्धी गतिविधियों को बढ़ावा देना तथा इन वर्गों के निर्धन लोगों को व्यावसायिक कुशलता के विकास और स्वरोजगार में सहायता प्रदान करना है। यह निगम अन्य पिछड़े वर्गों के उम्मीदवारों को कृषि तथा सम्बन्धित क्षेत्र, दस्तकार और पारम्परिक

व्यवसाय, तकनीकी व्यवसाय, लघु व्यापार, लघु उद्योग और परिवहन सेवाओं हेतु ऋण/अनुदान भी प्रदान करता है। गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले पिछड़े वर्गों से सम्बन्धित स्त्रियों के लिए राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग वित्त और विकास निगम ने एक स्कीम **'न्यू स्वर्णिमा'** आरम्भ की है। इस स्कीम के अन्तर्गत 4 प्रतिशत की रियायती ब्याज दर पर प्रति लाभ-भोगी 50 हजार रुपये तक की वित्तीय सहायता ले सकता है।

इन सुविधाओं के कारण अन्य पिछड़े वर्गों ने अपनी आर्थिक व राजनीतिक स्थिति काफी ऊँची कर ली है तथा अनेक प्रदेशों में इनका राजनीतिक क्षेत्र में सर्वोच्च पदों पर प्रतिनिधित्व है। इनकी प्रमुख समस्याएँ शिक्षा व सरकारी नौकरियों में स्थान प्राप्त करने की है जो इनकी प्रगति के कारण काफी सीमा तक कम होती जा रही है। परन्तु यह बात ध्यान देने योग्य है कि अन्य पिछड़े वर्गों में भी जो अत्यन्त निम्न दलित वर्ग सम्मिलित हैं, उन्हें आरक्षण का विशेष लाभ नहीं मिल पा रहा है। सभी सुविधाओं का अत्यधिक लाभ उन्हीं वर्गों के परिवारों को मिल रहा है जो पहले से ही काफी समृद्ध हैं।

भारतीय संविधान में महिलाओं को प्राप्त सुरक्षा

भारत में महिलाओं को भी कमजोर वर्गों में ही सम्मिलित किया जाता है क्योंकि शिक्षा, रोजगार एवं सत्ता की दृष्टि से उनका स्थान पुरुषों की तुलना में काफी निम्न रहा है। इसलिए स्वतन्त्रता-पश्चात् सरकार ने महिलाओं को पुरुषों के समान सभी अवसर उपलब्ध कराने के लिए तथा महिला-पुरुष समता पर बल देने के लिए स्पष्ट नीति अपनाई है जिसके अन्तर्गत महिला कल्याण को स्पष्टत: प्राथमिकता दी गई है। 1976 ई० से पूरे देश में महिलाओं के लिए एक राष्ट्रीय योजना प्रारम्भ की गई है। यह योजना महिला कल्याण तथा विकास की नीतियों व कार्यक्रमों को बनाने के लिए निर्देश देती है। महिला एवं बाल विकास विभाग में महिला ब्यूरो, नीतियों एवं कार्यक्रमों के क्रियान्वयन तथा समन्वय के लिए राष्ट्रीय संस्था है। इस बात को ध्यान में रखते हुए कि महिलाओं के आर्थिक स्तर में सुधार से उनके सामान्य स्तर को बढ़ाने में सहायता मिलती है, महिलाओं की आय में वृद्धि करने के कार्यक्रमों पर जोर दिया गया है। महिलाओं और बच्चों के लिए चल रहे विकास कार्यक्रमों को पुनर्जीवित रखने के लिए सितम्बर 1985 ई० में बने **मानव संसाधन विकास मन्त्रालय** (Ministry of Human Resource Development) में महिला और बाल विकास के लिए अलग-अलग विभाग बनाया गया है। सरकारी विभाग महिलाओं को भारतीय संविधान के अन्तर्गत उपलब्ध प्रावधानों को सामने रखकर महिला को सुरक्षा देने हेतु नीतियों का निर्माण करते हैं।

लैंगिक समता (Gender equality) का सिद्धान्त भारतीय संविधान की प्रस्तावना, मौलिक अधिकारों, मौलिक कर्त्तव्यों तथा निर्देशक (निदेशक) सिद्धान्तों में प्रतिष्ठापित है। संविधान न केवल महिलाओं को समान अधिकार देता है, अपितु राज्यों को भी महिलाओं के पक्ष में संरक्षणात्मक भेदभाव (Positive discrimination) को अपनाने का आदेश देता है। प्रजातान्त्रिक राज्य व्यवस्था की रूपरेखा के अन्तर्गत हमारे कानूनों, विकासात्मक नीतियों, योजनाओं एवं कार्यक्रमों का उद्देश्य विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं की तरक्की करना है। भारत ने महिलाओं को समान अधिकार देने सम्बन्धी अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों तथा मानवाधिकारों सम्बन्धी साधनों की समय-समय पर अभिपुष्टि की है। इन सब में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण 1993 में हुए 'महिलाओं के प्रति सभी प्रकार के भेदभावों का निवारण सम्मेलन' (सीडा) प्रमुख है। 'सीडा' महिलाओं के प्रति सभी प्रकार के भेदभाव दूर करने हेतु किया गया एक अन्तर्राष्ट्रीय समझौता है। इसके साथ ही घरेलू हिंसा से महिलाओं का आरक्षण अधिनियम 2005 गर्भधारण, पूर्व और प्रसव पूर्ण निदान तकनीक अधिनियम, 2003 महिलाओं की प्रस्थिति उन्नत करने हेतु सरकार द्वारा किए गए नए कानूनी प्रयास हैं।

भारतीय संविधान के अनेक अनुच्छेदों में महिलाओं को उपलब्ध अधिकारों का उल्लेख है एवं सुरक्षा के प्रावधान भी रखे गए हैं। इन अनुच्छेदों में 14, 15(1), 15(3), 16, 16(2), 23(1), 39(a), 39(d), 39(e), 42, 46, 47, 51-A(e), 243-D(3), 243-D(4), 243-T(3) तथा 243-T(4) प्रमुख हैं। इन अनुच्छेदों में किए गए प्रावधान निम्नलिखित हैं—

(1) महिलाओं को कानून के समक्ष समानता [अनुच्छेद-14],

(2) राज्य भारत के किसी नागरिक के साथ लिंग के आधार पर भेदभाव नहीं करेगा [अनुच्छेद-15(1)],

(3) राज्य महिलाओं हेतु कोई भी विशिष्ट प्रावधान करने हेतु सशक्त होगा। अन्य शब्दों में राज्य महिलाओं हेतु सकारात्मक भेदभाव का प्रावधान कर सकता है [अनुच्छेद-15(3)],

(4) राज्य के अन्तर्गत आने वाले रोजगारों या किसी भी पद पर नियुक्ति हेतु सभी नागरिकों को समान अवसर उपलब्ध होंगे [अनुच्छेद-16],

(5) किसी भी नागरिक के साथ रोजगार या पद हेतु लिंग के आधार पर कोई भेदभाव नहीं होगा या अयोग्य घोषित नहीं किया जाएगा [अनुच्छेद-16(2)],

(6) मानव तस्करी तथा जबरन श्रम प्रतिबन्धित होगा [अनुच्छेद-23(1)],

(7) जीवन-यापन के पर्याप्त साधनों के अधिकार पर पुरुषों एवं महिलाओं में समानता होगी [अनुच्छेद-39(a)],

(8) राज्य द्वारा भारतीय पुरुषों एवं महिलाओं को समान कार्य हेतु समान वेतन प्रदान करना होगा [अनुच्छेद-39(d)],

(9) राज्य यह सुनिश्चित करेगा कि महिला कर्मचारियों के स्वास्थ्य एवं ताकत (Strength) के साथ कोई दुर्व्यवहार नहीं होगा तथा उन्हें आर्थिक आवश्यकता के आधार पर ऐसा व्यवसाय करने हेतु विवश नहीं होना पड़ेगा, जो उनकी ताकत की दृष्टि से अनुपयुक्त हो [अनुच्छेद-39(e)],

(10) सरकार कार्य एवं प्रसूति (मातृत्व) सहायता हेतु न्यायोचित एवं मानवीय दशाएँ सुरक्षित करने का प्रावधान करेगी [अनुच्छेद-42],

(11) राज्य कमजोर वर्गों के लोगों के शैक्षिक एवं आर्थिक हितों की विशेष देखभाल करेगा तथा उन्हें सामाजिक अन्याय एवं सभी प्रकार के शोषण से संरक्षण को प्रोत्साहित करेगा [अनुच्छेद-46],

(12) राज्य अपने लोगों के पोषण के स्तर तथा जीवन स्तर को ऊँचा उठाएगा [अनुच्छेद-47],

(13) सभी भारतीय नागरिकों का यह कर्त्तव्य होगा कि वे उन प्रथाओं की निन्दा करेंगे, जो महिलाओं की गरिमा का अपमान करने वाली हैं [अनुच्छेद-51-A(e)],

(14) पंचायत में प्रत्यक्ष चुनाव हेतु निर्धारित कुल सीटों में एक-तिहाई सीट महिलाओं हेतु आरक्षित होंगी [अनुच्छेद-243-D(3)],

(15) सभी स्तर की पंचायतों के एक-तिहाई अध्यक्षों के पद महिलाओं के लिए आरक्षित होंगे [अनुच्छेद-243-D(4)],

(16) प्रत्येक नगरपालिका हेतु प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा भरी जाने वाली एक-तिहाई सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित होंगी [अनुच्छेद-243-T(3)] तथा

(17) नगरपालिकाओं के अध्यक्ष के एक-तिहाई पद महिलाओं के लिए आरक्षित होंगे [अनुच्छेद-243-T(4)]।

अत: स्पष्ट है कि भारतीय संविधान में महिलाओं की सुरक्षा हेतु अनेक प्रावधान किए गए हैं। ●